अध्याय २

धर्म की उत्पत्ति और विकास

धर्म-दर्शन धार्मिक मान्यताओं का दार्शनिक विवेचन है, परन्तु इस दार्शनिक या बौद्धिक विवेचन को समझने से पहले हमें धर्म की उत्पत्ति (Origin) और विकास (Development) को समझना आवश्यक है। धर्म पहले है और धर्म-दर्शन बाद में। अतः धर्म को समझे बिना हम धर्म-दर्शन को नहीं समझ सकते। धर्म को समझना भी सरल कार्य नहीं। इसका स्वरूप अनेक है तथा इसकी समस्यायें भी अनेक हैं, परन्तु धर्म को सरल और सुगम रीति से समझने में धर्म का इतिहास सहायक है। धर्म के इतिहास में हम धर्म की उत्पत्ति और विकास पर विचार करते हैं। उत्पत्ति और विकास के सम्बन्ध में चार महत्वपूर्ण सिद्धान्त हैं—

Scanned by TapScanner

धर्म की अवस्थाए
(Phases of Religion)

धर्म के विस्तृत अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि विद्वानों ने इसकी विभिन्न अवस्थाओं की ओर संकेत किया है। धर्म आरम्भ से ही परिवर्तनशील रहा है। इसके विकास में अनेक विचारों का प्रादुर्भाव हुआ और समय के साथ ही उनका अन्त भी। विचारों के अनुसार नैतिकता, ईश्वर की कल्पना, आकार, स्वरूप एवं उनकी विशेषताओं आदि में भी परिवर्तन हुए और इसके फलस्वरूप धर्म की अवस्थाएँ सदा ही एक समान नहीं रह सकीं। इसका रूप सदा से ही बदलता रहा है।

आरम्भ काल में मानव में बुद्धि का अभाव था और इसलिए उस समय का धर्म जादू, अन्धविश्वास आदि से ग्रस्त था। धीरे-धीरे बुद्धि का विकास हुआ, मानव ने अपनी आध्यात्मिक भूख के कारण ईश्वर को एक सहायक के रूप में अपनाया और इस प्रकार आराधना की उत्पत्ति हुई और आधुनिक काल में जब लोगों ने देखा कि धर्म बुद्धि का विषय नहीं तो इसका आधार विश्वास हो गया। इस तरह धर्म की अवस्थाएँ सदा बदलती रही हैं। इसकी अवस्थाओं की ओर ध्यान देने से यह स्पष्ट होता है कि विद्वानों ने धर्म की ओर विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा है। पर उनके वर्गीकरण के मूल में बुद्धि का मुख्य हाथ रहा है। फलतः वे अधिकांशतः सैद्धान्तिक हो गये हैं।

धर्म का वर्गीकरण प्रो० गैलवे, हीगेल, डॉ० राधाकृष्णान, प्रो० एटकिन्सन ली आदि ने किया है। यहाँ हमलोग प्रो० एटकिन्सन ली के धर्म के वर्गीकरण का अध्ययन करेंगे। इन्होंने धर्म के वर्गीकरण के आधार में क्रियात्मक पहलू पर मुख्यतः ध्यान दिया है। हमलोगों ने धर्म के स्वरूप के अध्ययन में यह स्वीकार किया है कि सभी धर्म व्यवहारवादी होता है अतः यह धर्म का सबसे मुख्य आधार है।

प्रो० ली के अनुसार धर्म की निम्नलिखित अवस्थाएँ हैं—

(१) प्रारम्भिक धर्म (Primitive religion)
(२) प्राकृतिक धर्म (Naturalistic religion)
(३) मानवीय धर्म (Humanistic religion)
(४) आध्यात्मिक धर्म (Spiritual religion)

अब हम इन सभी धर्मों की अलग-अलग व्याख्या प्रस्तुत करेंगे।

Scanned by TapScanner

(१) प्रारम्भिक धर्म
(Primitive Religion)

प्रारम्भिक धर्म किसे कहते हैं ?

जैसा कि इसके शब्द से ही स्पष्ट है यह वह धर्म है, जिसे हम प्राचीन अर्थात् आरम्भिक काल के लोगों के बीच पाते हैं। परन्तु शाब्दिक अर्थ प्रारम्भिक धर्म की सही व्याख्या करने में पूर्णतः सफल नहीं कहा जा सकता है। आरम्भ काल में मानव ने धर्म की जो कल्पना कर रखी थी वह अत्यन्त ही सीमित और संकुचित थी। उस काल के लोगों ने धर्म को अनेक अन्धविश्वास और भय तथा जादू से ओत-प्रोत कर दिया था। अतः यदि हम प्रारम्भिक धर्म का अर्थ प्राचीन लोगों के धर्म से न समझकर असभ्य और अशिक्षित लोगों के धर्म से समझें तो ज्यादा उचित होगा। यह सत्य है कि प्राचीन काल के लोगों ने धर्म का जो रूप स्वीकार किया था वह उनकी असभ्यता का पूर्णतः दिग्दर्शन कराता है।

यदि हम इस धर्म के स्वरूप का अध्ययन करें तो यह स्पष्ट हो जायगा कि प्रारम्भिक धर्म की संज्ञा इसे क्यों दी गई है। इसका मूल कारण यह है कि कोई दूसरा शब्द प्रारम्भिक धर्म के सही अर्थ को व्यक्त करने में पूर्णतः सफल नहीं था और इसलिए लोगों ने इसे प्रारम्भिक धर्म कह कर पुकारा। प्रारम्भिक धर्म का विकास अनेक रूपों में हो पाया है। अतः अब हमें उन रूपों की अलग-अलग व्याख्या कर लेनी चाहिए।

प्रारम्भिक धर्म के विभिन्न रूप
(Different forms of Primitive religion)

प्रारम्भिक धर्म के अध्ययन से हमें इसके अनेक रूप देखने को मिलते हैं, जिन्हें प्राचीन काल के लोगों ने स्वीकार किया था। अतः उन सब की अलग-अलग चर्चा यहाँ प्रस्तुत करनी होगी। प्रारम्भिक धर्म के निम्नलिखित रूप हैं—

(i) जीववाद (Animism)
(ii) प्रेतवाद (Spiritism)
(iii) फेटिशिज्म (Fetishism)
(iv) मनाइज्म (Manaism)
(v) टोटेमिज्म (Totemism)

(i) जीववाद (Animism)

जीववाद को प्रारम्भिक धर्म का सर्वप्रथम रूप माना जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। धर्म के इस रूप की सर्वप्रथम व्याख्या टॉयलर (Tylor) ने अपनी

Scanned by TapScanner

पुस्तक "Primitive culture" में की थी। इसके अनुसार जीववाद धर्म का वह रूप है जिसे हम मानव के प्रत्येक जाति (race) में पाते हैं; चाहे वह विकसित अथवा अविकसित क्यों न हो? टॉयलर का जीववाद के सम्बन्ध में दिया गया सिद्धान्त अधुनिक विज्ञान के लिए भी उपयोगी है।

जीववाद का क्या अर्थ है? टॉयलर के अनुसार जीववाद वह धर्म है जिसके अनुसार प्रत्येक वस्तु में आत्मा निहित है। वे आत्माएँ शरीर को किसी भी समय अपनी इच्छा से त्याग कर सकने में समर्थ थीं। प्राचीन काल के लोग अपनी इस धारणा को सिद्ध करने के लिए स्वप्न का सहारा लेते थे। उनके अनुसार यदि स्वप्न में एक व्यक्ति अपने आपको बहुत दूरी पर किसी स्थान में अनुभव करता है तो इसका अर्थ है कि वास्तव में स्वप्न की अवस्था में उसकी एक आत्मा उस स्थान पर घूम रही थी तथा दूसरी आत्मा उसके शरीर में वर्तमान थी। इसी प्रकार यदि स्वप्न की अवस्था में एक आत्मा किसी दूसरे व्यक्ति से बात करती है तो यह भी सिद्ध होता है कि उस व्यक्ति में भी दो आत्माएँ हैं। प्राचीन काल के लोग अपनी इन्हीं अनुभूतियों के आधार पर दो आत्माओं की कल्पना करते थे।

इस आत्मा के स्वरूप के सम्बन्ध में प्राचीन काल के लोगों का यह मत था कि वे भौतिक तत्त्वों से बने हैं, परन्तु वे भौतिक तत्त्व साधारण भूत (matter) के समान नहीं। वे ऐसे भूत के बने हैं जिनकी कल्पना भी हम नहीं कर सकते हैं। जीववाद के अनुसार आत्मा का निवास केवल मानव में ही नहीं, बल्कि संसार के प्रत्येक सजीव तथा निर्जीव पदार्थों में भी है। जिस प्रकार मानव में आत्मा है उसी प्रकार वह अन्य वस्तुओं में भी निहित है।

परन्तु अब प्रश्न आता है कि क्या जीववाद को धर्म का रूप दिया जाना उचित है? जीववाद के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि इसके अन्दर कुछ ऐसी असंगतियाँ तथा त्रुटियाँ हैं, जिन्हें स्वीकार करना उचित नहीं।

सर्वप्रथम जीववाद के अनुसार आत्मा शरीर से पूर्णतः भिन्न है तथा वह अपनी इच्छानुसार जब चाहे शरीर का त्याग कर सकती है। पर यदि वह त्याग करने में पूर्णतः स्वतंत्र है तो आत्मा शरीर का सदा के लिए परित्याग क्यों नहीं कर देती है? इस बात का उत्तर जीववाद नहीं दे पाता है।

जीववाद शरीर में दो आत्माओं का अस्तित्व स्वीकार करता है और इस बात को सिद्ध करने के लिए स्वप्न का सहारा लेता है। यह कहता है कि स्वप्न की अवस्था में एक आत्मा स्वतन्त्र रूप से वातावरण में घूमती रहती है तथा बहुत दूर की चीजों का अनुभव भी प्राप्त करती है। आलोचकों का कहना है कि ऐसा हम क्यों

Scanned by TapScanner

स्वीकार करें कि प्रत्येक शरीर में दो आत्मायें हैं।* हम क्यों नहीं यही मान लें कि एक ही आत्मा है जो स्वप्न की अवस्था में वातावरण में स्वतंत्र रूप से घूमती है? दो आत्माओं को क्यों स्वीकार किया जाय? जीववाद इसका भी उत्तर देने में असमर्थ है।

फिर जीववाद के अनुसार स्वप्न की अवस्था में एक व्यक्ति की आत्मा दूसरे व्यक्ति से बात करती है। उदाहरण के लिए 'क' आत्मा 'ख' से बात करती है, पर यह यदि सत्य है तो दोनों के बीच हुई बात को दोनों व्यक्ति अनुभव करेंगे और स्वप्नावस्था समाप्त होने के बाद दोनों का स्वप्न एकमत (Coincide) होना चाहिए, पर ऐसा नहीं होता है।

अन्त में जीववाद के विरोध में यह कहा जाता है कि जब यह प्रारम्भिक धर्म है, एक ऐसा धर्म है जो प्राचीन काल के लोगों का धर्म है, जिसमें अज्ञानता और असभ्यता है, तो फिर वे दो आत्माओं की कल्पना कैसे कर सके? उनकी बुद्धि इतनी विकसित नहीं थी कि वे इतने तर्कपूर्ण विषय को सोच सकने में समर्थ हो सकें। अतः दो आत्माओं का विचार संदिग्ध कहा जा सकता है।

अतः हम पाते हैं कि जीववाद प्रारम्भिक धर्म का वह रूप है जिसमें अनेक असंगतियाँ वर्तमान हैं। अब प्रश्न है कि क्या इन असंगतियों के साथ उसे धर्म-माना जा सकता है? क्या धार्मिक चेतना की पूर्त्ति इस धर्म से संभव है? धर्म-दार्शनिकों के अनुसार जीववाद को धर्म के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह धर्म का आधार माना जा सकता है। इसके आधार पर अनेक धर्म की नींव पड़ी है। प्राचीन काल के असभ्य लोगों से लेकर विकसित लोगों के बीच जीववाद को धर्म का आधार माना गया है।

प्रो० गैलवे के अनुसार जीववाद को धर्म के पूर्व की अवस्था कहा जा सकता है। इसी प्रकार प्रो० ली के मतानुसार जीववाद देवतोपाख्यान (mythology) के समझने का आधार है न कि कोई विशिष्ट धर्म। अतः अन्त में यह कहा जा सकता है कि टॉयलर का जीववाद, जो संसार के प्रत्येक वस्तुओं में आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करता है, तथा जिसे टॉयलर ने धर्म कह कर पुकारा, वह उचित नहीं। धर्म का विकास जीववाद से हुआ है—जैसा कि टॉयलर ने माना है, दोषपूर्ण कहा जायगा। इसके सम्बन्ध में केवल इतना ही कहा जा सकता है कि प्राचीन काल के लोगों का धर्म जीववाद से शासित (dominated) था।

---

* "Animism is in fact, the groundwork of the philosophy of religion, from that of savages up to that of civilized people."

Scanned by TapScanner

(ii) प्रेतवाद (Spiritism)

प्रारम्भिक धर्म में जीववाद के वाद प्रेतवाद का ही स्थान है। लेकिन प्रेतवाद के अध्ययन से यह प्रतीत होता है कि जीववाद का ही यह एक विकसित रूप है।

जीववाद में कहा गया है कि आत्मा शरीर में निहित है और अपनी इच्छानुसार शरीर का त्याग कर वातावरण में भ्रमण करती है। परन्तु यह आत्मा को भूत (spirit) नहीं मानता; क्योंकि इसका सम्बन्ध एक विशेष शरीर के साथ रहता है, जिसका त्याग वह कभी-कभी ही करती है। पर, जब यह आत्मा शरीर का परित्याग सदा के लिए कर देती है तो यह प्रेत का रूप ले लेती है। अर्थात् हम कह सकते है कि आत्मा ही प्रेत बन जाती है ; जब यह शरीर को सदा के लिए परित्याग कर देती है, और इस दशा में इसका शरीर के साथ किसी प्रकार का कोई सम्बन्ध नहीं रह जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि जिस सत्ता को प्राचीन काल के लोगों ने प्रेत (spirit) की संज्ञा दे रखी थी वह दूसरी वस्तु या सत्ता नहीं, आत्मा ही है। ये आत्माएँ शरीर-विच्छेद के बाद शरीर से पूर्णतः अलग दिक् (space) में निवास करती हैं, जिन्हें हम प्रेत के नाम से सम्बोधित करते हैं। ये मृत आत्माएँ जीवित आत्माओं के बीच रहती हैं तथा वातावरण में भ्रमण करती हैं। इसके साथ ही वे जीवित आत्माओं को सुख, दुःख, वेदना, खुशी आदि भी देती हैं।

इस प्रकार हम पाते हैं कि 'प्रेत' का रूप धारण कर लेने पर आत्मा की शक्ति बढ़ जाती है। अतः जीवित आत्माएँ अपने सुख-दुःख आदि के लिए उनपर पूर्णतः निर्भर करने लगती हैं। चूँकि ये मृत आत्माएँ जीवित आत्माओं के सुख-दुःख आदि के कारण बन जाती हैं, इसलिए मानव उनसे भय खाने लगता है। जब कभी वे क्रोधित होती हैं, उनकी पूजा-आराधना कर उन्हें प्रसन्न किया जाता है। इस प्रकार प्रेतवाद (spiritism) में पूजा का विकास होता है। जीवित आत्माएँ प्रेतों की उपासना करना शुरू कर देती हैं।

अतः प्रेतवाद में आत्माएँ ही प्रेत बन जातीं हैं, अर्थात् वे ईश्वर का रुप धारण कर लेती हैं। धर्म के विकास के इसी स्थल वर हर्बर्ट स्पेन्सर (Herbert Spencer) ने अपने मुख्य सिद्धान्त "पूर्वजों की पूजा" को जन्म दिया। इसके अनुसार हम यदि प्राचीन काल के लोगों की धार्मिक चेतना का अध्ययन करें तो हमें पता चलेगा कि वे अपने पूर्वजों की मृत आत्माओं की उपासना करते थे। हर्बट स्पेन्सर के अनुसार धर्म का यह रूप ही सबसे प्रारम्भिक माना जाना चाहिए।

प्राचीन काल के लोगों में बुद्धि का अभाव था और इस कारण वे निर्जीव और सजीव में कोई भेद नहीं कर पाते थे। फलतः लोगों ने दोनों को ही समान महत्त्व दिया। प्राचीन काल के लोगों के अनुसार जिस प्रकार मानव की आत्माएँ उसके शरीर में निहित हैं उसी प्रकार संसार की अन्य सभी वस्तुओं में भी आत्मा का निवास है।

Scanned by TapScanner

परन्तु यदि दोनों के बीच वे भिन्नता दिखाने में असमर्थ थे तो उन वस्तुओं की पूजा क्यों करते थे जिन्हें हम निर्जीव कहते हैं ? इसके उत्तर में यह कहा जा सकता है कि उन वस्तुओं में आत्म-चेतना तथा स्वतंत्र संकल्प नहीं था, वरन् उन्हें उन मृत आत्माओं का आसन समझा जाता था।

अतः प्रेतवाद में उन आत्माओं की पूजा होती थी जिनका सम्बन्ध शरीर से सदा के लिए विच्छेद हो जाता था। अब प्रश्न है कि क्या 'प्रेतवाद' को धर्म के रूप में माना जा सकता है। जब हम इसका आलोचनात्मक अध्ययन करते हैं तो हमारे समक्ष इसकी अनेक त्रुटियाँ स्पष्ट हो जाती हैं।

सर्वप्रथम प्रेतवाद की आलोचना करते हुए यह कहा जा सकता है कि धर्म के लिए जिस पवित्र ईश्वर की आवश्यकता है उसका इसमें पूर्ण अभाव है। प्रेतवाद में यह बताया गया है कि प्रेत, जिसे प्राचीन काल के लोगों ने पूजा का विषय माना, वह मृत आत्मा ही है, और कुछ नहीं। अतः उन आत्माओं में कोई ऐसी विशेषता नहीं जिसे पवित्र (sacred) कहा जाय तथा जिसकी उपासना की जाय। मृत्यु, उस आत्मा में जिसने शरीर का सदा के लिए परित्याग कर दिया है, कोई नवीन चीज नहीं लाती, जिसके आधार पर हम उसे पूजा के विषय के रूप में मान सकें। यह केवल इतना कह पाता है कि मृत्यु के बाद आत्माएँ सदा के लिए भ्रमणशील हो जाती थीं। पर इसके पूर्व वे कभी-कभी शरीर का परित्याग करती थीं, जैसा कि हमने जीववाद में पाया है। अतः 'प्रेत' (spirit) अर्थात् मृत आत्माओं को पूजा के विषय के रूप में मानना उचित नहीं।

प्रेतवाद की दूसरी त्रुटि यह है कि इस धर्म में मृत आत्मा अर्थात् प्रेत को शून्य वातावरण में घूमते हुए स्वीकार किया गया है, पर यह गलत है। जैसा कि हम जानते हैं, आत्मा आवश्यक रूप से किसी-न-किसी शरीर में ही निवास करती है। इसलिए यह नहीं माना जा सकता कि वह शून्य दिक् (space) में घूमती है।

अतः इन त्रुटियों के कारण प्रेतवाद की नींव कमजोर होती गई और ज्यों-ज्यों धर्म का विकास होता गया लोगों की प्रेत पूजा (spirit worship) की भावना समाप्त होती गई।

(iii) फेटिशिज्म (Fetishism)

प्रारम्भिक धर्म के अन्तर्गत धर्म का तीसरा रूप "फेटिशिज्म" के रूप में आता है। यह प्राचीन काल के लोगों का ऐसा धर्म है जिसमें लोगों ने कुछ वस्तुओं में रहस्यात्मक शक्ति का आरोपण किया है। संसार की बहुत-सी चीजों की व्याख्या प्राचीन काल के लोगों के लिए संभव नहीं था, क्योंकि उनमें कार्य-कारण के ज्ञान का पूर्ण अभाव था। और, इस कारण से यदि प्राचीन काल के लोग किसी ऐसी वस्तु या

Scanned by TapScanner

घटना को देखते थे जिसकी व्याख्या उनके लिए असंभव थी तो वे यह कहते थे कि उस वस्तु के अन्दर एक रहस्यपूर्ण (mysterious) शक्ति है।

डॉ० हैडॉन (Dr. Haddon) के अनुसार किसी भी वस्तु या घटना को प्राचीन काल के लोग 'फेटिश्' की संज्ञा दे देते थे, यदि वह वस्तु या घटना उनके ध्यान को आकर्षित करने में सफल होता था। इसके साथ ही लोगों ने इन घटनाओं तथा वस्तुओं की पूजा शुरू कर दी। और, आगे चलकर 'फेटिश्' ही धार्मिक चेतना का केन्द्र माना जाने लगा।

चूँकि प्राचीन काल के लोगों में कार्य-कारण का ज्ञान नहीं था तथा वे चीजों की व्याख्या करने में असमर्थ थे, इसलिए उन्होंने बहुत-सी प्राकृतिक चीजों की पूजा करनी शुरू कर दी। "फेटिशिज्म" में छड़ी, पत्थर आदि की पूजा भी की जाती थी। प्राचीन काल के लोगों के लिए पहाड़, कन्दरा, गुफा आदि आकर्षण के मुख्य कारण थे, जिनकी व्याख्या कार्य-कारण के आधार पर वे नहीं कर सकते थे। इसलिए लोगों ने इन वस्तुओं को भी पूजा के विषय के रूप में चुना। इनके साथ ही भूकम्प, इन्द्रधनुष, बिजली आदि घटनाओं की भी, जिन्हें वे अपने व्यावहारिक जीवन में देखते तथा अनुभव करते थे, पूजा करने लगे। उनके लिए यह ,सभी घटनाएँ तथा वस्तुएँ अत्यन्त रहस्यमय लगती थीं और इसी कारण वे इनकी पूजा भी करते थे। जीववाद तथा प्रेतवाद के समान ही "फेटिशिज्म" को भी धर्म के रूप में मानना असंगत-सा लगता है। इसे धर्म का विकृत रूप कहना ज्यादा उचित दीख पड़ता है। प्रेतवाद की तरह ही हम इसमें भी किसी पवित्र (Sacred) सत्ता (Being) का अभाव पाते हैं। पर हम जानते हैं कि धार्मिक चेतना एक ऐसे ईश्वर की माँग करती है जो नित्य, पवित्र, असीमित तथा दिक् और काल से परे हो। पर हमारी धार्मिक चेतना की पूर्त्ति यहाँ धर्म के इस रूप में नहीं हो पाती है और इसलिए फेटिशिज्म को धर्म के रूप में स्वीकार करना संदिग्ध ही नहीं, अनुचित कहा जायगा।

(iv) मनाइज्म (Manaism)

वर्तमान मानवीय विज्ञान (Anthropology) एक ऐसे धर्म की ओर संकेत करता है जिसे हम मनाइज्म कह कर पुकारते है। कुछ लोगों के अनुसार "मनाइज्म" धर्म के रूप में "जीववाद" से भी पहले आया। पर हम यहाँ इस बात की व्याख्या नहीं करेंगे कि सर्वप्रथम कौन-सा धर्म मानव के बीच आया।

"मनाइज्म" धर्म का वह रूप है, जिसमें हम भयमिश्रित श्रद्धा (awe) को पाते हैं। प्राचीन काल के लोगों ने एक शक्ति को स्वीकार किया जिसकी व्याख्या करना कठिन है। इस शक्ति को लोगों ने रहस्यपूर्ण तथा व्यक्तिगत बताया, जिसे "मना" (mana) की संज्ञा दी और जिसके सिद्धान्त को "मनाइज्म" कहा गया।

Scanned by TapScanner

यद्यपि लोगों ने इस शक्ति की व्याख्या के लिए दूसरे सम्बोधनों का भी प्रयोग किया परन्तु "मना" शब्द ही इसकी सफलतापूर्वक व्याख्या कर पाता है। "मना" क्या है? इसका स्वरूप क्या है? प्राचीन काल के लोगों के अनुसार "मना" एक अत्यन्त ही संवेगशील (emotional) मूल्य है। यह एक ऐसी शक्ति है जो सर्वज्ञाता तथा सर्वव्यापक है। यह एक ऐसी शक्ति है जो हमारे समक्ष प्राकृतिक वस्तुओं के माध्यम से आती है तथा जिसका ज्ञान हमें पूर्व से नहीं रहता है। प्राचीन काल के लोगों ने चूँकि इसे एक रहस्यपूर्ण शक्ति माना है इसलिए वे इसके अन्दर जादुई शक्ति का भी आरोपन करते हैं; यद्यपि उसका सम्बन्ध प्राकृतिक गुणों से कुछ भी नहीं।

प्राचीन काल के लोगों के विचारानुसार "मना" संसार की सबसे मूल्यवान् तथा सर्वशक्तिमान् सत्ता है। इससे परे दूसरी कोई भी सत्ता नहीं, जिसे उससे अधिक महत्ता दी जा सके। यह "मना" ही जीवन, शक्ति, सफलता, सुख आदि का दाता है। इसके कारण ही मानव अपने किसी कार्य में सफल होता है। लोगों का ऐसा मत था कि यदि कोई व्यक्ति किसी काम में सफलता प्राप्त करता है तो इसका कारण वह व्यक्ति स्वयं नहीं, बल्कि वह "मना" है जो उस व्यक्ति में वर्तमान है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को इसे पाने का प्रयत्न करना चाहिए। लोगों ने इस शक्ति को भौतिक पदार्थों के बीच भी बताया तथा कहा कि यह एक विद्युत् की तरह ही है।

प्राचीन काल के लोगों का यह मत था कि "मना" एक ऐसी शक्ति है, एक ऐसा रहस्य है जिसकी व्याख्या करना असम्भव है। मानव पूर्ण रूप से अपने शुभ-अशुभ के लिए इस शक्ति पर निर्भर कर सकता है। यह एक ऐसी शक्ति है जिसकी तुलना जीववाद के "आत्मा" तथा प्रेतवाद के 'प्रेत' से नहीं की जा सकती। क्योंकि मना के ऊपर मानव पूर्ण निर्भरता की भावना रखता है, जिसका अभाव आत्मा तथा प्रेत दोनों में है। "मना" की शक्ति की व्याख्या करते हुए यह कहा जा सकता है कि यदि युद्ध में कोई व्यक्ति विजयी होता है तो इसका कारण उसकी अपनी योग्यता नहीं, बल्कि यह "मना" है, जिसके कारण वह सफल होता है तथा दूसरा व्यक्ति पराजित होता है, क्योंकि उसके पास इस 'मना' का अभाव है।

अतः मना अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। पर इसके साथ ही यह खतरनाक भी कहा जा सकता है, जैसा कि प्राचीन काल के लोगों का विश्वास था। इस कारण लोगों ने अनेक ऐसे नियमों का निर्माण किया था जिनके कारण लोग इसे उचित रूप में प्रयोग कर सकें और फलतः भयानक खतरों से स्वतंत्र रह सकें। इन नियमों में मुख्यतः ये थे—नवजात शिशु को न छूना, मृत व्यक्ति को न छूना, तथा इसके अतिरिक्त कुछ जीवों की हिंसा का भी परित्याग बताया गया था। अतः प्राचीन काल के लोगों ने इसी रूप में "मनाइज्म" को धर्म का रूप दिया। परन्तु प्रो० ली के अनुसार मनाइज्म धर्म का एक निश्चित रूप नहीं। इनके अनुसार मनाइज्म धर्म के पहले की अवस्था कही जा सकती है, न कि एक मूल धर्म का रूप, क्योंकि मना में कोई ऐसा गुण नहीं, जिसके आधार

Scanned by TapScanner

पर इसे असीमित (Infinite) कहा जा सके, जो धार्मिक चेतना के विकास के लिए आवश्यक है।

पर अब यह प्रश्न आता है कि यदि हम यह कहते हैं कि यह धर्म के पहले की अवस्था है तो इसका आधार क्या है? इसके उत्तर में कुछ विद्वानों ने तर्क दिया और बताया कि मनाइज्म आवश्यक रूप से जीववाद के पहले की अवस्था है।

सर्वप्रथम, मनाइज्म के सम्बन्ध में मानवीय विज्ञान का मत है कि धर्म के रूप में सबसे पहले हमें धर्म की इस अवस्था का ही आभास मिलता है। सर्वप्रथम मानव ने मना को ही पूजा का विषय चुना और इसके बाद ही आत्मा या प्रेत की पूजा की भावना का विकास हो पाया। परन्तु सर्वप्रथम मना ने ही लोगों के बीच रहस्यमय शक्ति के रूप में स्थान बनाया और वह धार्मिक चेतना का आधार बना। अतः मनाइज्म जीववाद से पहले की अवस्था है।

आर० आर० मैरेट (R. R. Marett) के अनुसार मनाइज्म जीववाद के लिए स्थान बनाता है। दूसरे शब्दों में जीववाद का आधार मनाइज्म को माना जा सकता है जिसपर जीववाद अपना अस्तित्व कायम रखता है। इन दृष्टिकोणों से यह स्पष्ट है कि 'मनाइज्म' 'जीववाद' से पहले की अवस्था है। जीववाद के पूर्व ही प्राचीन काल के लोगों ने मना-ऐसी रहस्यपूर्ण और असीम शक्ति की उपासना करना आरम्भ कर दिया था। अतः जीववाद के पहले मनाइज्म आया और यह धर्म की पहली अवस्था कही गई।

(v) टोटेमिज्म (Totemism)

कुछ विद्वानों का मत है कि "टोटेमिज्म" ही धर्म का सर्वप्रथम रूप है। इसके पूर्व किसी अन्य धर्म का रूप हमारे समक्ष नहीं आता है। इन विद्वानों ने न तो जीववाद और न प्रेतवाद को ही धर्म का आरम्भिक रूप माना है। वे इन दोनों धर्मों की आलोचना करते हुए कहते हैं कि यद्यपि इन दोनों धर्मों का निष्कर्ष भिन्न-भिन्न है परन्तु फिर भी दोनों धर्मों ने ईश्वर की भावना का निर्माण प्राकृतिक वस्तुओं से प्राप्त संवेदना के आधार पर ही किया है।

जीववाद ईश्वर की कल्पना स्वप्न के आधार पर करता है तथा दूसरी ओर प्रकृतिवाद विश्व के प्राकृतिक वस्तुओं के आधार पर। अतः दोनों ने ईश्वर की कल्पना दृश्यमान वस्तु (Phenomenon) के आधार पर ही की है। पर यह विचार असंगत है; क्योंकि एक व्यक्ति जो स्वप्न देखता है उसे हम व्यक्ति ही कह सकते हैं, ईश्वर नहीं! और, इसी प्रकार प्राकृतिक वस्तुएँ, चाहे वे कुछ भी क्यों न हों, प्राकृतिक वस्तुमात्र ही हैं और कुछ नहीं!

Scanned by TapScanner

इसलिए हम व्यक्ति या प्राकृतिक वस्तुओं को ईश्वर का रूप नहीं दे सकते। अतः इन्हें धर्म का कारण बताना अनुचित होगा। इस तरह यह आवश्यक रूप से कहा जा सकता है कि इन दोनों के अतिरिक्त अवश्य ही कोई दूसरा धर्मविश्वास (cult) होगा जो इन दोनों से पहले ही प्राचीन काल के समक्ष आया होगा और इसी धर्म विश्वास को लोगों ने टोटेमिज्म की संज्ञा दी।

१८वीं शताब्दी के अन्त में सर्वप्रथम 'टोटम' शब्द का प्रयोग मानवीय शास्त्र (Ethnology) में हुआ। मैकलेनन (Maclennan) सबसे पहला व्यक्ति है जिसने कहा कि "टोटेमिज्म" एक ऐसा धर्मविश्वास है जिसे हम न केवल असभ्य लोगों के बीच ही पाते हैं बल्कि यह विकसित धर्मों में भी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसने यह भी बताया कि "टोटेमिज्म" ही वह धर्मविश्वास है जिसने पशुओं की पूजा तथा पेड़-पौधों की पूजा की भावना को जन्म दिया। परन्तु मैकलेनन का विचार कहाँ तक उचित है यह कहना कठिन-सा जान पड़ता है; क्योंकि एक विवेकशील व्यक्ति इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं होगा कि इसके ही कारण अनेक विकसित धर्मों का उद्भव हो पाया है।

टोटम का क्या अर्थ है? टोटम एक विशेष प्रकार की वस्तु है जो किसी वर्ग के लोगों का प्रतिनिधित्व करती है। लोगों ने किसी जानवर या पेड़ को टोटम का रूप दिया और उसे विशेष वर्ग के लोगों के साथ जोड़ दिया गया। यद्यपि इस टोटम को ईश्वर का स्थान नहीं दिया जा सकता है, परन्तु फिर भी प्राचीन काल के लोगों ने इसे पवित्र बताया और साथ ही इसे पूजा के विषय के रूप में चुना। मुख्यतः लोगों ने कौवा (Crows), छिपकिली (Lizards) तथा कंगारू को टोटम के रूप में स्वीकार किया। उन्होंने इन जीवों की हत्या को निषिद्ध बताया।

टोटम किसी एक जानवर या पेड़ को न कहकर उस विशेष जाति के सभी जानवर या पेड़ को कहा जाता था तथा एक विशेष वर्ग या जाति (clan) के लोग ही उसे टोटम के रूप में मानते थे। टोटम का स्थान मुख्यतः कोई पशु या वृक्ष ही ले पाता था। निर्जीव पदार्थों को लोग टोटम के रूप में नहीं मानते थे। कभी कोई निर्जीव पदार्थ यदि रहस्यपूर्ण होता था तो लोग उसे टोटम के रूप में मान लेते थे, अन्यथा नहीं।

कुछ जाति के लोगों में यह देखा जाता था कि बच्चा जब जन्म लेता था तो वह भी उसी टोटम को स्वीकार करता था जिसे उसके पिता मानते थे। पर, कुछ दूसरे जाति के लोगों के बच्चे उस वस्तु को टोटम के रूप में मानते थे जिसे उनकी माताएँ मानती थीं। प्रो० ग्रे (Prof Grey) के अनुसार आस्ट्रेलिया का प्रत्येक परिवार अलग-अलग किसी पशु या वृक्ष को टोटम के रूप में स्वीकार करता था।

टोटम धर्म में शादी के सम्बन्ध में भी एक निषेध था। एक व्यक्ति उस लड़की के साथ ही शादी कर सकता था जो उसके टोटम ग्रुप की नहीं होती थी। दूसरे शब्दों

Scanned by TapScanner

में शादी के लिए दोनों को दो भिन्न-भिन्न टोटम ग्रुप का होना आवश्यक समझा जाता था। इसके अतिरिक्त प्राचीन काल के लोगों का ऐसा विश्वास था कि जिस वस्तु को वे टोटम के रूप में मान लेंगे वह उन्हें किसी प्रकार की हानि नहीं पहुँचा सकता है। बल्कि उस जाति का प्रत्येक जानवर या पेड़ उनके लिए सहायक होगा तथा रक्षक भी।

परन्तु "टोटेमिज्म" के अन्दर भी अनेक ऐसी त्रुटियाँ हैं, जिनके आधार पर उसे धर्म का रूप नहीं दिया जा सकता है। सर्वप्रथम आज की आधुनिक खोजों ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह कहना गलत है कि वर्तमान काल का प्रत्येक धर्म टोटेमिज्म की अवस्था से होकर गुजरा है। हम इसे अस्वीकार नहीं करते कि यह एक अत्यन्त ही पुराना धर्म-विश्वास है पर अनेक ऐसी असभ्य एवं पुरानी जातियाँ हैं जिनके बीच टोटेमिज्म का कोई ज्ञान नहीं। वे धर्म के इस रूप से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि टोटेमिज्म सर्वव्यापकता (universality) से कोसों दूर है ?

यद्यपि टोटम एक सहायक तथा रक्षक माना जाता है, तथापि पूजा के विषय के रूप में इसे नहीं स्वीकार किया गया है। प्रो० ली के अनुसार "टोटेमिज्म" धर्म न होकर एक सामाजिक भावना मात्र कहा जा सकता है। इसी कारण एडवर्ड मेयर (Eduard Meyer) ने कहा है कि टोटेमिज्म को धर्म के रूप में स्वीकार कर तथ्य को गलत रूप से समझना है। अतः अन्त में यह कहा जा सकता है कि टोटेमिज्म धर्म नहीं; यद्यपि कि प्राचीन काल के लोगों ने इसे धर्म के रूप में माना था।

प्रारम्भिक धर्म का मूल्यांकन
(Evaluation of Primitive religion)

प्रारम्भिक धर्म किसे कहते हैं तथा इसके कौन-कौन से रूप हैं, इसके अध्ययन के पश्चात् अब हम इस बात का मूल्यांकन करेंगे कि क्या प्रारम्भिक धर्म वास्तव में धर्म कहा जा सकता है अथवा नहीं ?

सर्वप्रथम इसके अध्ययन के सिलसिले में हमलोगों ने यह पाया है कि प्रारम्भिक धर्म में जादू का मुख्य स्थान है। यह जादुई शक्ति से अत्यन्त प्रभावित कहा जा सकता है। प्रारम्भिक धर्म के प्रत्येक रूप, जैसे—फेटिशिज्म, मनाइज्म तथा टोटेमिज्म में हम जादू की प्रधानता पाते हैं। पर, धर्म एक आध्यात्मिक वस्तु है जिसमें जादू का कोई स्थान नहीं होना चाहिए। प्रारम्भिक धर्म में इसकी प्रधानता है और इस आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रारम्भिक धर्म एक अत्यन्त ही दुर्बल धर्म का प्रतीक है जहाँ आध्यत्मिकता की किसी वस्तु का पूर्ण अभाव है।

Scanned by TapScanner

प्रारम्भिक धर्म की दूसरी असंगति यह है कि लोगों में कार्य-कारण के ज्ञान का अभाव था इसलिए वे प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या नहीं कर पाते थे। भूकम्प, बिजली आदि प्राकृतिक नियमों को लोगों ने रहस्य के रूप में माना और इनसे भय करना शुरू किया। इसी प्रकार की अन्य ऐसी प्राकृतिक घटनाएँ थीं जिनकी व्याख्या कर सकने में प्राचीन काल के लोग असमर्थ थे और इसलिए उनकी व्याख्या हास्यास्पद जान पड़ती है। यदि कोई व्यक्ति बीमार पड़ जाता था तो इसका कारण प्रेत का प्रकोप समझा जाता था। प्रेत को सुख-दुःख का कारण मानकर उसकी पूजा की जाती थी। अतः प्राकृतिक धर्म को मान्यता इस कारण भी नहीं दी जाती थी, क्योंकि यह कार्य-कारण की व्याख्या करने में असमर्थ था।

हमलोगों ने प्रेतवाद तथा जीववाद के अध्ययन में देखा है कि ईश्वर की कल्पना प्राचीन काल के लोगों ने भौतिक वस्तुओं के आधार पर की है। पर यह उचित नहीं, क्योंकि ईश्वर कोई भौतिकवस्तु नहीं, बल्कि एक आध्यात्मिक सत्ता है। और, इसलिए प्रारम्भिक धर्म की यह असंगति है कि वह भौतिक पदार्थों के आधार पर ईश्वर की कल्पना करता है।

इसके अतिरिक्त प्रारम्भिक धर्मों में हम अनेकानेक अन्धविश्वास को पाते हैं जो धर्म के वास्तविक रूप को संकुचित कर देता है। लोगों की यह भावना थी कि यदि कोई शत्रु दूसरे पर विजय पाता है तो इसका कारण वह स्वयं नहीं बल्कि वह "मना" है जो उसके पास है पर दूसरे के पास नहीं। उसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति का केश या नाखून अपने अधिकार में कर लेता है तो वह उसे हानि पहुँचा सकता है, तथा यदि एक नवजात शिशु को एक वृद्धा स्त्री अपने पके केशों से स्पर्श करा दे तो वह बच्चा दीर्घायु होगा। अतः प्रारम्भिक धर्म अनेक अन्धविश्वासों से ओत-प्रोत है।

फिर प्राकृतिक धर्म को धर्म कहना इसलिए भी उचित नहीं जान पड़ता, क्योंकि इसमें ईश्वर की एक अत्यन्त ही संकुचित कल्पना की गई है। ईश्वर धर्म का आधार है। धर्म के विकास के लिए जैसे ईश्वर की आवश्यकता है, उसका प्रारम्भिक धर्म में पूर्ण अभाव है। ईश्वर के अभाव में धर्म का कोई अस्तित्व ही नहीं रह जाता है। क्योंकि व्यक्ति अपनी हर भावनाओं को ईश्वर पर दर्शाता है। इसके साथ ही वह यह भी आशा करता है कि ईश्वर उसकी हर उचित माँग की पूर्त्ति करेगा। पर प्रारम्भिक धर्म हमें ऐसा धर्म नहीं दे पाता।

अतः यह कहा जा सकता है कि प्रारम्भिक धर्म में अनेक ऐसी असंगतियाँ तथा त्रुटियाँ हैं, जो इसे धर्म के रूप में मानने में बाधक जान पड़ती हैं।

Scanned by TapScanner